अध्याय – प्रथम

शोध परिचय

1.1.0 प्रस्तावना :

शिक्षा मानव के विकास की अन्तिम व्यवस्था नहीं है, वह उसके व्यक्तित्व निर्माण की प्रथम सारणी है, जिस पर चढ़कर वह उन्नती के शिखर की ओर अग्रसर होता है। शिक्षा की सीढ़ी पर पैर रखने से पूर्व माँ की लोरियों, भाई–बहनों के संग खेल ही खेल में, परिवार के परिवेश के सूक्ष्म निरीक्षण तथा बाध्य समाज के संपर्क द्वारा अर्जित अनेक अनुभवों से निरंतर सीखता हुआ किसी भी शिक्षण संस्था में प्रवेश पाने के पश्चात भावों से विचारों की दुनिया से दाखिल होता है और विचारों का यह संसार उसके अर्जित ज्ञान की प्रसूति में सतत वृद्धि करता रहता है। विचारों में परिपक्वता हेतु शिक्षा रूपी भवन की नींव सृदृढ़ होनी चाहिए। जैसे कमजोर नींव वाली इमारत समय के झोंके से ढह जाती है वैसे ही सुनियोजित शिक्षा के बिना बिन जड़ वाले वृक्ष की भांति अर्धशिक्षित मानव धराशयी हो जाता है। दुर्भाग्यवश यही स्थिति स्वतंत्र भारत में शिक्षा, शिक्षक की हुई है।

शिक्षा जीवन की अनिवार्यता है। यह जीवन को सरस एवं सजीव बनाती है तथा शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास को ऊर्जा प्रदान करती है। बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास शिक्षा द्वारा ही संभव है।

1.2.0 प्राथमिक शिक्षा :

प्रत्येक राष्ट्र के जीवन में प्राथमिक शिक्षा–प्रथम प्राथमिकता की वस्तु है। यह पहली सीढ़ी है, जिसे सफलतापूर्वक पार करके ही कोई राष्ट्र अपने अभीष्ट लक्ष्य तक पहुंचता है। राष्ट्रीय जीवन के साथ जितना घनिष्ठ संबंध प्राथमिक शिक्षा का है, उतना माध्यमिक या उच्च्व शिक्षा का नहीं है। राष्ट्रीय विचारधारा एवं चरित्र का निर्माण करने में

जितना महत्वपूर्ण स्थान इसका है, उतना किसी दूसरी सामाजिक, राजनीतिक या शैक्षणिक गतिविधि का नहीं है। इसका संबंध किसी विशेष व्यक्ति या वर्ग से न होकर, देश की पूरी जनसंख्या से होता है। इसका हर कदम पर हर व्यक्ति के जीवन से संपर्क होता है।

इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि सब व्यक्तियों की शिक्षा अथवा जनसाधारण की शिक्षा ही राष्ट्रीय प्रगति का मूलाधार है। इस शिक्षा की अवहेलना करने के कारण भारत का पतन हुआ। अतः इसका उत्थान करके ही हमारे देश का कल्याण हो सकता है। इस प्रसंग में, स्वामी विवेकानन्द के अग्रांकित वाक्य सत्य से भरपूर हैं– " मेरे विचार से जनसाधारण की अवहेलना महान् राष्ट्रीय पाप है और हमारे पतन के कारणों में से एक है। सब राजनीति उस समय तक विफल रहेगी, जब तक कि भारत में जनसाधारण को एक बार फिर भली प्रकार शिक्षित नहीं कर लिया जायेगा।"[1],

स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात् प्राथमिक शिक्षा ने अपने विकास के स्वर्णिम युग में प्रवेश किया। संसार के सभी प्रगतिशील देशों के समान भारत ने भी बालकों एवं बालिकाओं को निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने के अपने उत्तरदायित्व को स्वीकार किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से ही प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनिकरण और पूर्ण साक्षरता हमारे शैक्षिक विकास के महत्वपूर्ण लक्ष्य रहे हैं। संविधान के अनुच्छेद 45 के निर्देशानुसार 6 से 14 वर्ष तक के सभी बालकों को राज्य अनिवार्य व निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा। इस संवैधानिक अपेक्षा को पूरा करने हेतु प्राथमिक शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने का कार्य राष्ट्रीय ध्येय के रूप में स्वीकार किया गया तथा शिक्षा के सार्वजनीकरण हेतु 4 लक्ष्य निर्धारित किये गये।

1.0.1 सार्वभौमिक पहुंच।

1.2.2 सार्वभौमिक नामांकन।

1.2.3 सार्वभौमिक धारणा।

1.2.4 सार्वभौमिक उपलब्धि।

1) सार्वभौमिक पहुंच :

सन् 1950 से इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रयास किये गये हैं। परंतु जनसंख्या के विस्फोट ने समस्त प्रयासों एवं उपलब्धियों को अर्थहीन बना दिया है। सीमित साधनों के कारण हम जनसंख्या वृद्धि की गति के साथ विद्यालयी सुविधाओं को प्रदान करने मे असमर्थ रहे हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की कार्य योजना में सभी राज्य को यह सुनिश्चित करने के लिये कहा गया कि 300 तक की आबादी बस्तियों में प्राथमिक विद्यालयों की व्यवस्था की जाये और प्राथमिक शिक्षा की सर्वसुलभ व्यवस्था के लिये एक मास्टर योजना बनायी जाये जिससे कि ऐसी बस्तियों में जहां 50 बच्चे भी प्राथमिक विद्यालय के लिये मिल सकें तो वहां प्राथमिक विद्यालय की व्यवस्था की जाये और जहां प्राथमिक विद्यालयों से उच्च प्राथमिक विद्यालयों के लिए बच्चे मिल सकें वहां एक उच्च प्राथमिक विद्यालय खोला जाये। अनुसूचित जाति तथा जनजातियों के लिये आवासीय विद्यालयों की व्यवस्था की जाये।

2) सार्वभौमिक नामांकन :

सार्वभौमिक नामांकन का अभिप्राय है निर्धारित प्रवेश आयु अर्थात 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को प्राथमिक स्कूलों में प्रवेश दिलाने से है। सामान्यतः यह पाया गया है कि अनेक बच्चे स्कूल में प्रवेश ही नहीं लेते हैं। अनुमानतः 11 बच्चे विद्यालय में

प्रवेश नहीं लेते हैं। अतः सार्वभौमिक नामांकन से अभिप्राय है कि इस वर्ग के सभी बच्चे स्कूल में प्रवेश लें। परंतु यह कार्य अभी काफी सीमा तक शेष है। विशेषतः लड़कियों, जनजातियों के बच्चे तथा निम्न स्तर के लोगों के बच्चों के नामांकन का कार्य पर्याप्त सीमा तक बाकी है।

नामांकन का सार्वभौमिकरण न होने का प्रमुख कारण बच्चों की आर्थिक दशा का खराब होना है जो अपने माता पिता की जीविकोपार्जन में सहायता करते हैं। वे विद्यालय जाने की बजाय अपने परिवार की आय की पूर्ति के लिए फार्म एवं खेतों, दुकानों तथा कारखानों में काम करते हैं। लड़कियां जीविकोपार्जन में प्रत्यक्ष रूप से सहायता न देकर घर के कामकाज तथा छोटे भाई–बहनों की देखभाल करती है। ऐसे बच्चे विद्यालय जाने में असमर्थ रहते हैं क्योंकि इनको परिवार की दृष्टि से किसी न किसी कार्य के लिए आवश्यक समझा जाता है। साथ ही माता पिता की उदासीनता तथा अप्रासंगिक एवं नीरस विद्यालय पाठ्यक्रम और सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराएं नामांकन के सार्वभौमीकरण के मार्ग में बहुत बड़ी बाधाएं हैं।

केन्द्र तथा राज्य सरकारों के द्वारा किये गये प्रयासों के फलस्वरूप देश की 94 प्रतिशत ग्रामीण आबादी को 3 किलोमीटर के दायरे में कम से कम एक प्राथमिक विद्यालय तथा 84 प्रतिशत ग्रामीण आबादी को 3 किलोमीटर के दायरे में एक उच्च प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध कराया गया। फलस्वरूप "प्राथमिक विद्यालयों तथा उच्च प्राथमिक विद्यालयों में दाखिला प्रतिशत निरंतर बढ़ा और यह प्राथमिक विद्यालयों में 1950–51 में 42–60 प्रतिशत से बढ़कर 1998–99 में 92.14 प्रतिशत हो गया। इस उपलब्धि के होते हुए भी हम सार्वभौम नामांकन के लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सके। सरकार ने नवीं योजना में अर्थात 2002 तक 6–14 आयु वर्ग के शतः प्रतिशत बच्चों को

प्रारंभिक शिक्षा सुलभ कराना अपना लक्ष्य निर्धारित किया।"[1] परंतु इस लक्ष्य की प्राप्ति संभव नहीं दिखाई पड़ रही है।

3) सार्वभौमिक धारणा :

प्रत्येक नामांकित बच्चे को विद्यालय में तब तक रोके रखा जाये जब तक वह विहित आयु का न हो जाये या विहित पाठ्यक्रम न पूरा कर ले। दूसरे शब्दों में बच्चा प्रारंभिक शिक्षा की समाप्ति तक विद्यालय में बना रहे। सामान्यतः यह देखा गया है कि अनेक बालक प्राथमिक शिक्षा को पूर्ण किये बिना ही विद्यालय छोड़ देते हैं। "एक अनुमान के अनुसार लगभग 60 प्रतिशत बच्चे कक्षा 5 से पूर्व तथा 75 प्रतिशत कक्षा 8 से पूर्व अध्ययन कार्य छोड़ देते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि कक्षा एक में प्रवेश लेने वाले प्रत्येक 100 बच्चों में से 40 बच्चे कक्षा 5 में पहुंच पाते हैं और केवल 25 बच्चे कक्षा 8 में पहुंच पाते हैं।'[2] इस प्रकार शेष बच्चे बीच में शाला त्याग कर देते हैं। अतः प्रारंभिक शिक्षा के संवैधानिक दायित्व को पूरा करने के लिए यह अनिवार्य है कि प्रारंभिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाया जाये। अतः इसके लिये प्रवेश लेने वाले सभी बच्चों को विद्यालय में कक्षा 8 तक रोके रखने के लिए हरसंभव उपाय किये जाने चाहिए। विश्व बैंक की रिपोर्ट में कहा गया है कि बच्चों की दाखिला दिलाने के लिहाज से भारत ने अच्छी उपलब्धियां हासिल की है लेकिन सबसे जरूरी बात यह है कि बच्चे स्कूल में निर्धारित आयु तक टिके तथा पढ़ाई बीच में न छोड़े। भारत में केन्द्र, राज्य सरकारों तथा स्थानीय प्रशासन को चाहिए कि वे बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा का चक्र पूरा करने के लिए प्रेरणा दें। इसके लिये विद्यालयों को बच्चों के करीब लाया जाये तथा स्तरीय शिक्षा प्रदान की

---

1. त्यागी गुरसनदास, भारतीय शिक्षा का परिदृश्य, P. 257
2. त्यागी गुरसनदास, भारतीय शिक्षा का परिदृश्य, P. 258

जाये। जिन बच्चों को स्कूल तक ला पाना संभव न हो उनके लिए अनौपचारिक शिक्षा या वैकल्पिक शैक्षिक कार्यक्रम तैयार किये जायें।

4) सार्वभौमिक उपलब्धि :

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में संकल्प किया गया कि 21 वी शताब्दी के शुरू होने से पूर्व देश में 14 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों को निःशुल्क, अनिवार्य तथा गुणवत्ता की दृष्टि से संतोषजनक शिक्षा उपलब्ध कराई जाये। इसके लिये कार्य योजना में निम्न बातों पर बल दिया गया–

(अ) 14 वर्ष की अवस्था के समस्त बच्चों की विद्यालयों में भर्ती तथा उनका विद्यालय में टिके रहना।

(ब) शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार।

1.3.0 प्राथमिक शिक्षा में गुणात्मक सुधार :

उपरोक्त लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु शिक्षा सुविधाओं में तेजी से विस्तार हुआ, तेजी से शालाएं खुली, तेजी से बच्चों का नामांकन हुआ, तेजी से शिक्षकों की नियुक्तियां हुई, सब कुछ इतनी अभूतपूर्व तेजी से हुआ कि आंकड़ों के दबाव में शिक्षा की गुणवत्ता चरमरा गई जबकि हमारा अंतिम लक्ष्य बालक को गुणवत्तायुक्त शिक्षा देना ही है अन्यथा हमारे सारे प्रयास व्यर्थ है।

प्राथमिक शिक्षा के गुणात्मक सुधार के महत्व प्रकाश डालते हुए डॉ. रघुनाथ सफाया लिखते हैं – "प्रारंभिक शिक्षा के परिमाणात्मक प्रसार (Quantitative expansion) ने संविधान के अनुलेख 45 के निर्देश के पालन करने में आज एक अधिक गंभीर समस्या उत्पन्न कर दी है। अब वह अवस्था आ गई है कि जब प्रारंभिक शिक्षा के

स्तरों के गुण संबंधी विकास को अत्यावश्यक स्वीकार किया गया है। गुंण स्वयं अपने आप में साधन है। लेकिन पूर्ण प्रसार हो जाने के बाद गुण संबंधी सुधार के प्रश्न उठाने की जो कल्पना की गई है, उसके साथ उद्देश्य संबंधी सुधार के बिगड़ने का भय भी है। आज स्कूल उपलब्ध तो कराये गये हैं, लेकिन वे साधन सामग्रीहीन है, भवन, वित्त, अध्यापकों और आवश्यक संगठन से रहित है। अनिवार्य शिक्षा के उद्देश्य से छात्र एक साथ भीड़ की भीड़ इकट्ठे हुए हैं, लेकिन उचित शिक्षा का अभाव ही रहा। साधनहीन, भवन रहित और अधूरे अध्यापकों वाले स्कूलों में केवलमात्र छात्रों की बड़ी संख्या एकत्र करते जाने का कोई लाभ नहीं है। अतः अब वह अवस्था लानी होगी। जब परिमाणात्मक और गुण संबंधी कार्यक्रम अन्तर्बद्ध (Interpenetrate) हो जायेंगे।"1"

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में भी कहा गया है कि हमारा लक्ष्य शाला में प्रवेश का ही नहीं, अपितु समग्र अर्थात बच्चे नियमित शाला में आयें टिकें तथा सीखें।

जब तक शालाओं में विस्तार और बच्चों के प्रवेश की बात थी तो योजना शासन और समाज के बीच तय हो सकती थी किन्तु जब बात बच्चों के विद्यालय में टिकने और सीखने की है तो इसका निदान व समाधान शिक्षक के पास ही है। शिक्षक के समक्ष यह एक चुनौती है कि एक बच्चा जो घर की विकट आर्थिक परिस्थितियों के बाद पांच वर्ष तक स्कूल में रहा तो उसने क्या सीखा। अतः शिक्षक का यह दायित्व हो जाता है कि प्रत्येक बच्चा अपनी आयु एवं कक्षा के अनुसार उतना न्यूतनतम तो सीखे ही जितना कि समाज उससे अपेक्षा करता है।

न्यूनतम अधिगम स्तर (MLL) को ऊँचा उठाने के लिये जहां बच्चों का नियमित शाला आना, पढ़ाई में रूचि लेना, लचीला पाठ्यक्रम होना, स्कूल में उपयुक्त

---

1. डॉ. रघुनाथ सफाया, भारतीय शिक्षा की वर्तमान समस्याएं P. 73

कमरे तथा शिक्षण सामग्री तथा शिक्षकों की आवश्यक संख्या जैसी मूलभूत सुविधाओं का होना जरूरी है वहीं दूसरी और शैक्षिक प्रक्रिया की सफलता मुख्य रूप से शिक्षक के चरित्र, योग्यता पर निर्भर है। वास्तव में वह ही शिक्षा का आधार स्तंभ है। शाला में कक्षा शिक्षण शिक्षक की गुणवत्ता तथा उसके चरित्र पर निर्भर है। शिक्षक ही अपने प्रभावशाली शिक्षण से अपने विषय को रूचिकर बनाकर शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार कर सकता है। शिक्षक के महत्व पर प्रकाश डालते हुए हैनरी वैन डायक ने कहा है कि "शिक्षक वह है, जो सुप्त आत्माओं की तंद्रा भंग करता है, आलसियों को चेताता है, उत्सकों को और अधिक उत्सुक बनाता है और जो चल रहे हैं उनकी गति को तेज करता है"

किसी भी शिक्षक की व्यक्तित्व संबंधी विशेषताओं तथा उसकी अध्यापन गुणवत्ता के विकास में शिक्षण प्रशिक्षण का विशेष महत्व है।

शिक्षण कार्य की सफलता मुख्य रूप से शिक्षकों के सही चयन सेवा पूर्व एवं सेवाकालीन, सतत् प्रशिक्षण कार्य की उपयुक्त परिस्थितियां और समुचित प्रोत्साहनपर निर्भर है।

शिक्षा आयोग (1964–66) में शिक्षा के बारे में बताया गया है कि जो कारक शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं, उनमें दक्षता, शिक्षक का चरित्र निः सन्देह महत्वपूर्ण कारक है।

प्राथमिक शिक्षा के गुणात्मक विचार हेतु दो बिन्दुओं पर लक्ष्य सामने रखा गया है–

1. शिक्षा का विकेन्द्रीयकरण किया जाये।
2. सेवा पूर्व व सेवाकालीन शिक्षक प्रशिक्षण की आवश्यकता तथा उनमें गुणात्मक सुधार।

1.4.0 अध्यापकों का सेवारत प्रशिक्षण (PMOST, SOPT)

शिक्षकों का सेवारत प्रशिक्षण सभी विकसित देशों में एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम बन गया है और इसे व्यावसायिक तैयारी व उन्नयन का अन्तरंग अंग समझा जाता है। अब यह माना जा रहा है कि सेवा पूर्व का प्रशिक्षण चाहे कितना ही अच्छा क्यों न हो, इस नित नये परिवर्तन के युग में सदा–सदा के लिए वह पर्याप्त नहीं हो सकता चाहे वह शिक्षक के लिए हो चाहे प्रशासक के लिए। आज ज्ञान के सभी क्षेत्रों में वृद्धि हो रही है, सांस्कृतिक व भौतिक परिवर्तनों के साथ पाठ्यक्रम बदल रहे हैं, छात्र और अध्यापकों की संख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई है और शिक्षा, सीखने की प्रक्रिया, बाल व युवा मनोविज्ञान आदि कई क्षेत्रों में हमारा ज्ञान बढ़ा है। ऐसी अवस्था में शिक्षकों को उन परिवर्तनों से परिचित रखने की अत्यन्त आवश्यकता है। यदि विद्यालयों को नई चुनौतियां का भली प्रकार सामना करने के लिए सक्षम बनाना है तो सबसे पहले शिक्षकों को उन सब नये विचारों से परिचित रहना होगा। चरतसिंह मेहता लिखते हैं– "अध्यापकों के सेवारत प्रशिक्षण की महत्ता यद्यपि स्वीकार तो काफी पहले की गई परंतु इस संबंध में समुचित कार्यवाही का आरम्भ स्वतंत्रता के बाद ही हुआ है। माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) ने पहली बार सफलतापूर्वक यह बात कही कि चाहे सेवा पूर्व का प्रशिक्षण कितना ही उत्तम क्यों न हो वह अपने आप में उत्तम अध्यापक तैयार नहीं कर सकता। वह तो ज्ञान, कौशल और अभिवृत्तियां उत्पन्न कर अध्यापक को इस योग्य बनाता है कि वह आत्मविश्वास और कुछ पूर्व अनुभव के आधार पर अपना कार्य आरम्भ कर सके। सेवारत प्रशिक्षण के क्षेत्र में सबसे पहला व्यवस्थित प्रयत्न 1955 में हुआ जबकि अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षा परिषद् की स्थापना की गई और 24 शिक्षक उनके कार्य की प्रगति देखकर सन् 1962 में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में भी 30 सेवा प्रसार विभाग खोले गए। बाद में इनकी संख्या 45 हो गई।"[1]

---

[1] चरत सिंह मेहता, शिक्षक प्रशिक्षण के सिद्धांत एवं समस्याएँ PP 36-37

उपरोक्त बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 व प्रोग्राम ऑफ एक्शन में निर्धारित मार्ग निर्देशों का अनुकरण करके शिक्षक शिक्षा के कार्य को जवाबदेह बनाया गया। शिक्षा अवस्था के विकेन्द्रीकरण को दृष्टिगत रखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में जिला स्तर पर शिक्षक प्रशिक्षण के लिए एक केन्द्र पोषित योजना (शिक्षक प्रशिक्षण का पुर्नसंगठन एवं पुर्नसंरचना) को अक्टूबर 1989–80 में शुरू किया। इसका उद्देश्य देश भर में स्कूली शिक्षकों, प्रौढ़ एवं अनौपचारिक शिक्षा कार्यकर्ताओं और शिक्षक प्रशिक्षकों का ज्ञान योग्यता और अध्यापन कौशल निरंतर बढ़ाने के लिये व्यवहार्यगत संस्थागत ढांचा तैयार करना था और उन्हें नई दिशा एवं प्रशिक्षण प्रदान करने और उनके ज्ञान को निरंतर बढ़ाने के लिए शास्त्रीय तथा तकनीकी संसाधन का आधार तैयार करना था। इसके अन्तर्गत ही शिक्षकों का उन्मुखीकरण कार्यक्रम पी. मोस्ट (1986) **(PMOST) (Programme of Mass Orientation)** देश भर में लागू किया गया, जो 4 वर्ष तक चला। इससे 20 लाख शिक्षक लाभान्वित हुए। इस कार्यक्रम में शिक्षकों को संज्ञाशील बनाने पर विशेष बल दिया गया। विविध योजनाओं के परिप्रेक्ष्य में उन्हें जानकारी दी गई और साथ ही शिक्षकों को अनेक शिक्षाशास्त्रीय मुद्दों पर विकसित होने के लिए मदद दी गई। इसी प्रकार **(SPIT) (Special Orientation Programme for Primary Teacher) (1993-94)** नाम का एक प्रभावी कार्यक्रम भी देश भर में चलाया गया।

1.5.0 स्पेशियल ओरिएन्टटेशन प्रोग्राम और प्राइमरी टीचर

(Special Orientation Programme For Primary Teachers) (1993-94)

सन 1993–94 एक महत्वपूर्ण प्रशिक्षण कार्यक्रम देशभर में चलाया गया। जो स्पेशियल ओरिएन्टटेशन प्रोग्राम और फॉर प्राईमरी टीचर (SPOT) के नाम से सर्वपरिचित है। इसके

अन्तर्गत 17 लाख शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया गया। इसे इस योजना के अन्तर्गत मुख्य रूप से निम्नलिखित महत्वपूर्ण क्षमताओं को विकसित करने का लक्ष्य रखा गया था।

1.5.1 न्यूनतम अधिगम स्तर (Minimum Learning Level)

1.5.2 ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड (Operation Black Board)

1.5.3 बालक केन्द्रीत शिक्षा (Child-Centred Education)

1.5.4 क्रिया आधारीत अध्यापन (Activity-Based Teaching)

1) न्यूनतम अधिगम स्तर –

छात्रों में शैक्षिक उपलब्धि का स्तर सुधारने के लिये अधिगम के न्यूनतम स्तरों के निर्धारण की आवश्यकता अनुभूत की गई। इसका प्रमुख उद्देश्य था कि सभी बच्चों को बिना किसी, जाति, धर्म, वंश, सम्प्रदाय स्थान व लिंग भेद के अच्छी शिक्षा मिले। दूसरे शब्दों में छात्रों में शैक्षिक उपलब्धि के स्तर को सुधारने के लिए अधिगम के न्यूनतम स्तरों को निर्धारित करने की आवश्यकता महसूस की गई। विद्यालयों में अध्ययन ग्राह्ता में सुधार करने की नीति में इस बात पर ध्यान दिया गया कि कक्षाओं में क्या हो रहा है ? और समानता तथा गुणवत्ता के लिए कार्य करना। इस नीति का लक्ष्य शिक्षा के वास्तविक, सार्थक तथा कार्यात्मक स्तरों पर प्राप्त होने वाले अधिगम उत्पादों या परिणामों को निर्धारित करना है तथा उन उपायों का निर्धारण करना है जिनके द्वारा यह सुनिश्चित किया जा सके कि स्कूल स्तर को पूरा करने वाले सभी बच्चे इन परिणामों को प्राप्त कर लें।

अधिगम के न्यूनतम स्तरों के क्षेत्र में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद ने यूनिसेफ की सहायता से 1978 में दो परियोजनाओं ((i) Primary Education

Renewal and (ii) Development Activity in Community Education and Participation) पर कार्य किया और न्यूनतम अधिगम सातत्यक (Minimum Learning Continuum) रेखांकित किये। इसमें उन अधिगम परिणामों का उल्लेख किया गया जिनकी प्राप्ति कक्षा 1,2,3,4 तथा 5 का अध्ययन पूरा करने वाले छात्रों से अपेक्षा की जा सकती थी। इस सातत्यक में वर्णित दक्षताओं (Competencies) के आधार पर प्राथमिक शिक्षा पाठ्यक्रम तकनीकीकरण परियोजना में निष्पत्ति परिक्षणों (Achievement Tests) का विकास किया गया। 1986 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद ने प्राथमिक स्तर पर अधिगम के न्यूनतम स्तर विषयक दस्तावेज तैयार किया।

5 जनवरी 1990 को मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग ने डॉ. आर. एच. दबे की अध्यक्षता में एक ग्यारह सदस्यीय समिति का गठन किया।

'दबे समिति ने न्यूनतम अधिगम स्तर को दक्षताओं की अपेक्षित प्राप्ति के रूप में परिभाषित किया है। साथ ही इस समिति ने इन अधिगम स्तरों को अन्तिम दक्षताओं (Terminal Competenciese) के रूप में निर्धारित किया है। अधिगम के न्यूनतम स्तर ऐसी दक्षताओं द्वारा विनिर्दिष्ट किये गये हैं जिनमें प्रत्येक छात्र एक विशेष कक्षा के अन्तर्गत प्रवीण होना आवश्यक है। इनमें विशेष बल निम्नलिखित पर दिया गया–

(अ) प्राथमिक शिक्षा में प्रासंगिकता तथा कार्यात्मकता।

(ब) विषय–वस्तु की अपेक्षा दक्षताओं पर बल देकर पाठ्यक्रम के भार को कम करना।

(स) मूलभूत दक्षताओं तथा कौशलों की प्राप्ति को सुनिश्चित करना।

(द) कक्षा में सभी बलों में नैपुण्य अधिगम (Mastery Learning) को प्रोत्साहित करना।

(य) शिक्षकों को नैदानिक तंत्र देने तथा उपचारी अध्ययन को सुन्दर बनाने के लिए कक्षा में सतत तथा व्यापक मूल्यांकन करना। विद्यालयों में अधिगम के न्यूनतम स्तरों को लागू करने के लिये निम्नलिखित सोपान है –

1. अधिगम या अध्ययन की उपलब्धि के वर्तमान स्तर का मूल्यांकन।
2. क्षेत्र–विशेष के लिये अधिगम के न्यूनतम स्तरों की परिभाषा तथा समय सीमा जिसके अन्तर्गत इसे प्राप्त किया जा सकेगा।
3. दक्षता आधारित शिक्षण के लिए शिक्षण विधियों का अनुस्थापन।
4. छात्र–अधिगम का सतत एवं व्यापक मूल्यांकन।
5. पाठ्य–पुस्तकों की समीक्षा और यदि आवश्यक है तो उनमें संशोधन।
6. भौतिक सुविधाओं, शिक्षक–प्रशिक्षण तथा मूल्यांकन का प्रावधान।'[1]

2) ऑपरेशन ब्लेक बोर्ड –

'ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना अवरोधन में सुधार लाये जाने के उद्देश्य से प्राथमिक स्कूलों में सुविधाओं में सुधार करने के लिये वर्ष 1987–88 में शुरू की गई थी। इस योजना के तीन परस्पर निर्णायक तत्व हैं, यथा

1) लड़कों तथा लड़कियों के लिए अलग शौच घर सुविधाएँ तथा एक बरामदे सहित सभी मौसमों के लिए उपयुक्त कम से कम दो पर्याप्त बड़े कमरों की व्यवस्था।

2) प्रत्येक स्कूल में कम से कम दो शिक्षक हों जिनमें से यथासंभव एक महिला हो।

3) ब्लैक बोर्ड नक्शों चार्टों, खिलौनों और कार्य अनुभव के लिये उपकरणों सहित आवश्यक पठन सामग्रियों का प्रबंध।

---

[1] त्यागी गुरूसनदास, भारतीय शिक्षा का परिदृश्य P-281

ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड के कार्यान्वयन की गुणवत्ता में सुधार के लिए निम्नलिखित उपाय किये जायेंगे।

1) राज्य सरकारें उपकरण की टूट–फूट और उन्हें बदलने के लिए प्रावधान करेगी।

2) विशेष रूप से तैयार किये गये शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम के तहत शिक्षकों को ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड शिक्षण सामग्री प्रयोग के लिए प्रशिक्षित किया जायेगा।

3) नियुक्त किये गये शिक्षकों में कम से कम 50 प्रतिशत महिलाएं होंगी। इससे बालिकाओं के नामांकन और उन्हें स्कूल में रोके रखने में सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।' [1]

3) बालक–केन्द्रीत शिक्षा –

'प्रारंभिक शिक्षा की पहली जरूरत है कि बच्चे तक ओर कुछ भी पहुंचे वह बहुत इतमीनान और सहजता से पहुंचे। शुरू से ही उसे सिखाने के लिए बाल केंद्रित और क्रियात्मक प्रक्रियाओं का सहारा लिया जाना चाहिए। अगर किसी भी वर्ग की पहली पीढ़ी में पढ़ाई शुरू की है तो उसे अपनी रफ्तार से सीखने का मौका देना चाहिए। उसकी मदद जरूर की जाए। ज्यों–ज्यों बच्चा बढ़े, उसे ज्ञान की बातें बताई जाएं और नई जानकारी की मात्रा धीरे–धीरे बढ़ाई जाए ताकि अभ्यास के साथ उसकी दक्षता भी बढ़ती जाए। प्राथमिकता स्तर पर बेहतर यही है कि बच्चों को किसी भी कक्षा में न रोका जाए। जहां तक संभव हो, अंकों के आधार पर मूल्यांकन न किया जाए। शिक्षा पद्धति में शारीरिक दंड का नामोनिशान तक नहीं होना चाहिए। स्कूल का समय और यहां तक कि छुट्टियां भी बच्चों की सुविधा अनुसार तय की जानी चाहिए।'[2]

---

1. त्यागी गुरूसनदास, भारतीय शिक्षा का परिदृश्य PP-277-278
2. अग्रवाल जे. सी. राष्ट्रीय शिक्षा नीति P-39

4) क्रिया आधारित अध्यापन –

"हमारे शिक्षाशास्त्रियों ने स्पष्ट रूप से यही स्वीकार किया है कि प्रारंभिक शिक्षा के कालखण्ड में बालक को जो कुछ भी सीखना है वह खेल के द्वारा ही सीखना है जिससे बालक की ज्ञानेन्द्रियां प्रशिक्षित हो जावे। बालक यदि किसी वस्तु का स्पर्श करके या उसे उलट–पलट कर देखना चाहे तो उसे ऐसा करने से रोकना नहीं चाहिये। इससे उसको ज्ञानेन्द्रियों को उपयोगी करने का समुचित अवसर मिलेगा। वह स्वतंत्रता पूर्वक उसका निरीक्षण करेगा और वस्तु के रंग, रूप, आकार, गर्म, ठण्डा, कोमल, कठोर आदि की जानकारी उसे प्राप्त हो सकेगी। इस आयु में केवल पुस्तकीय ज्ञान देना, कुछ नपे तुले शब्दों–वाक्यों को रटा देने से ज्ञानेन्द्रियां प्रशिक्षित नहीं हो पाती उसकी कार्येन्द्रियों के विकास के लिए कूदना, फांदना क्रियात्मक कार्यकलाप जैसा भाव गीत, भाव नृत्य, संगीत आदि करना आवश्यक है। इनसे शरीर पुष्ट होता है। श्रवण, चक्षु, कान आदि इन्द्रियां का प्रशिक्षण होता है।"[1]

1.6.0 स्टेटवाईड मैसिव एण्ड रिगरस ट्रेनिंग फॉर प्राइमरी टीचर –

(Statewide Massive and Rigorous Training For Primary Teachers) [SMART-PT]

"महाराष्ट्र राज्य के अन्तर्गत SOPT योजना में सुधार करके एक नया कार्यक्रम विकसित किया गया जिसका नाम (SMART-PT Programme) Statewide Massive and Rigorous Traning for Primary Teachers Programme रखा गया इस कार्यक्रम के मुख्यतः दो उद्देश्य हैं –

1) प्रारंभिक स्तर के शिक्षकों को "क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम" (Competency bassed Curriculum) की मूलभूत संकल्पना से परिचित कराना।

---

[1] स्कूल टुडे, हिन्दी मासिक, जून–जुलाई P-4

2) प्रारंभिक स्तर के शिक्षकों को क्षमताधिष्ठित पाठ्यपुस्तकों को (Competency-bassed texbooks) को बाल केन्द्रित (Child Centred और क्रिडन (Play Way) पद्धति से कार्यान्वित करने में सक्षम बनाना।

सन् 1995 में 'क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम' महाराष्ट्र सरकार द्वारा बनाये गये थे। और इस पाठ्यक्रम पर आधारित पाठ्यपुस्तकें जून 1997 से सभी विद्यालयों के लिए कक्षा पहली (I) से पांचवी (v) तक के लिए निर्धारित की गई। इस नये पाठ्यपुस्तकों से शिक्षकों को परिचित कराने से पहले सन् 1997 से तीन वर्ष लगातार राज्यभर प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया था।

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत पहले चरण में कक्षा 'पहली' और 'दूसरी' के शिक्षकों का समावेश था। और दूसरे चरण में कक्षा 'तीसरी' और चौथी के शिक्षकों का समावेश किया गया था और तीसरे चरण के अन्तर्गत कक्षा 'पांचवी' के अध्यापक सम्मिलित थे।

सन् 1997 में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत राज्य के सभी विद्यालय जिसमें सभी माध्यम के विद्यालय शामिल है। जो अनुदानित (Grant) बिना अनुदानित (Non-Grant) , खाजगी विद्यालय (Private Schoals), जिल्हा परिषद, नगर परिषद के तकरीबन 1,75,000 अध्यापकों को सुचारू रूप से प्रशिक्षित किया गया। इस तीन स्तरीय प्रशिक्षण का कालावधी 60 दिनों का था।

इस प्रशिक्षण का एक महत्वपूर्ण भाग यह था कि इसमें दस शैक्षिक क्षमताओं (Ten Educational Competency) को विस्तारित रूप से अध्यापकों में उन क्षमताओं के उपयोग के बारे में जानकारी देना है।

उसी तरह से सन् 1998 में कक्षा तीन और चार के लिए राज्य स्तर पर प्रशिक्षण दिया गया जिसमें तकरीबन 1,70,000 प्रारंभिक स्तर के शिक्षकों को सम्मिलित किया गया।

प्रशिक्षण के तीसरे चरण में सन् 1998 में कक्षा पांच के एक लाख से भी ज्यादा अध्यापकों को सम्मिलित किया गया था। इस राज्य स्तरीय प्रशिक्षण को कार्यान्वित करने के लिए पहले 1000 तक मार्गदर्शकों को प्रशिक्षण दिया गया इनके निर्देशन में फिर राज्य के हर जिले में प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया। यह प्रशिक्षण कार्यक्रम 12 दिनों तक चला जिसमें पहली सात दिन मराठी भाषा, गणित और पर्यावरण शिक्षा की विषय सामग्री की समृद्धी (Enrichments) और शिक्षक क्षमता (Competency) विकसित करने के लिए दिये गये। और बचे पांच दिनों में अंग्रेजी भाषा की प्रवीणता अर्जित (Teaching Skill) के उपयोग पर दिये गये।'[1]

1.6.1 स्मार्ट पी.टी. के अन्तर्गत क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम – (Competency-based Curriculum)

'सन् 2000 तक प्रारंभिक शिक्षा का सार्वत्रीकरण करने और शिक्षा का गुणात्मक दर्जा सुधारने के लिए 6 से 14 वर्ष वयोगट के सभी बालकों को दर्जात्मक शिक्षा देने के लिए महाराष्ट्र शासन द्वारा महत्वपूर्ण कदम उठाये गये।

शिक्षा का प्रचलित पाठ्यक्रम यह शैक्षिक उद्देश्य को प्राप्त करने की दृष्टि से परिपूर्ण था। फिर भी उस तैयार किये गये पाठ्यपुस्तकों में से विद्यार्थियों में कौनसी क्षमता विकसित करना है यह स्पष्ट नहीं होता था। शैक्षिक उद्देश्य को दुर्लक्षीत करके आकलन से ज्यादा स्मरण को महत्व दिया जाता था। इससे अध्ययन प्रक्रिया में एक प्रकार का जडत्व आ गया था।

---

[1] इंडियन एजूकेशन रिव्यू वाल्यूम नं. 52 P-51-53

क्षमता का अर्थ –

सही मायने में विद्यार्थी विकास का मतलब उसके अंदर की उपजत सुप्त गुण व शक्तियों का उपयोगिता की दृष्टि से हुआ दृश्य व मूर्त रूपांतर है। इसी को हम क्षमता कहते हैं। इस क्षमता के विकास के लिए प्रारंभिक स्तर पर क्षमताओं के विशिष्ट क्षेत्र और स्तर निश्चित किये गये हैं। इन स्तरों के आधार पर विद्यालय की शैक्षिक प्रक्रिया का निश्चित मसुदा "क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम" (Competency- bassed Curriculum) के नाम से तैयार किया गया है। प्रारंभिक स्तर पर विहित की गई सभी क्षमता विद्यार्थियों में प्रभुत्व स्तर तक प्राप्त होना इसका मतलब ही दर्जात्मक (गुणात्मक) शिक्षा का सार्वत्रिकरण है।

1.6.2 स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम की कार्ययोजना –

गुणात्मक एवं दर्जात्मक प्राथमिक शिक्षा के लिए "क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम 1995" और इस पाठ्यक्रम पर आधारित पाठ्यपुस्तकें 1997–98 इस शैक्षणिक वर्ष में कक्षा पहली और दूसरी एवं तीसरी और चौथी की क्षमताधिष्ठित पाठ्यपुस्तकें 1998–99 से लागू की गई है इस पाठ्यक्रम के सुयोग्य उपयोग से विद्यार्थी के ऊपर से शिक्षा का बोझ कम होकर विहित की गई क्षमता का विकास अधिक सहजता से व योग्य गती से होगा ऐसी अपेक्षा है।

अध्यापकों को नई क्षमताधिष्ठित पाठ्यपुस्तकों का उपयोग कृतिशीलता से जोड़ कर आनंददायी पद्धती से एवं अधिक प्रभावी रीति से करने के लिए संबंधित शिक्षकों का प्रशिक्षण स्वयं उद्बोधन के स्वरूप से होना आवश्यक है।

इस प्रशिक्षण में, केन्द्र शासन, महाराष्ट्र प्राथमिक शिक्षण परिषद और युनिसेफ (UNICEF-United Nation Child Emergency Fund) इनके सहयोग से सभी शालाओं के सभी शिक्षक व मुख्य अध्यापकों के प्रशिक्षण की विकेन्द्रित (Decentralize) व्यवस्था की गई है। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम का "SMART-PT (Statewide Massive and Rigorous Training for Primary Teachers)

ऐसा संक्षिप्त नामकरण किया गया है। "इस कार्यक्रम में राज्यस्तरीय तज्ञ मार्गदर्शकों से जिल्हास्तरीय प्रशिक्षण दिया जायेगा और फिर जिला स्तरीय व्यक्तियों द्वारा केन्द्र स्तर पर प्रशिक्षण दिया जायेगा। और उन मार्गदर्शकों के निर्देशन में राज्य के सभी शालाओं के प्रारंभिक शिक्षक एवं मुख्य अध्यापकों को प्रशिक्षण देने की योजना बनाई गई थी। यह योजना जिल्हा परिषद व नगरपालिका अन्तर्गत केन्द्रशालाओं एवं अन्यत्र उसी स्तर पर कार्यान्वित की गई थी। इस 'क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम" के उद्देश्य एवं कार्ययोजना निम्नलिखित रूप से स्पष्ट की जा सकती है।

(I) छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए जैसी क्षमताएँ विहित की गई है। उसी प्रकार उत्कृष्ट शिक्षक निर्माण होने के लिए भी शिक्षक प्रशिक्षण की विविध उद्देश्य, क्षमताओं के स्वरूप में निश्चित करके उस क्षमताओं का शिक्षकों में विकास करना चाहिए ऐसा विचार प्रवाह रूढ़ हो रहा है।

(II) प्रभावी शिक्षक निर्माण होने की दृष्टि से आवश्यक सभी पहलू दस प्रमुख क्षमताओं का चिकित्सक अभ्यास करके शिक्षकों ने अपनी गुणवत्ता बढ़ानी चाहिए और उत्कृष्ट शैक्षणिक कार्य के लिए उससे प्रेरणा मिलनी चाहिए इस दृष्टिकोण से क्षमताधिष्ठित साहित्य तैयार करने का प्रयत्न किया गया है।

(IV) प्रत्येक विद्यार्थी खुद होकर विस्तृत ज्ञानार्जन कर सकता है और उस पर विचार व चिंतन करके उसको कल्पकता की साथ देकर अपना अंगीकृत कार्य अधिक प्रभावी ढंग से कर सकता है। इस प्रशिक्षण से अध्यापकों को अभ्यास से स्वयं उद्‌बोधन चिंतन और अध्ययन–अध्यापन पद्धति की कल्पकता से चयन करने के लिए दिशा और प्रेरणा मिलेगी ऐसी आशा की गई थी, फिर भी अभ्यास में सातत्य और चिंतन की साथ दिये बगैर अपेक्षित क्षमता विकसित नहीं हो सकती है। अध्यापकों द्वारा बार–बार वैयक्तिक स्तर पर गटसंमेलन और शिक्षक शिविर में चिकित्सक अभ्यास और चर्चा किये बगैर अपेक्षित क्षमता विकसित नहीं हो सकती है।

(v) प्रत्येक व्यक्तियों में अर्न्तभुत उपजत व सुप्त गुण और शक्ति का उपयोगिता की दृष्टि से हुआ मूर्त और दृश्य रूपांतर ही क्षमता है। अध्यापक में ऐसे उपजत गुण, सुप्त शक्ति व क्षमता होती है। इस शिक्षक क्षमता को समृद्ध करने के दृष्टि से इस प्रशिक्षण का आयोजन किया गया था।

(vi) पाठ्‌यक्रम में दी गई क्षमता सर्व विद्यार्थियों में प्रभुत्व स्तर तक विकसित होना इसका अर्थ ही दर्जेदार एवं गुणात्मक शिक्षण का सार्वत्रिकरण है। अध्यापकों में अपेक्षित क्षमताओं का सार्वत्रिकरण हुए बगैर यह उद्‌देश्य साध्य नहीं हो सकता उत्कृष्ट अध्यापक बनने के लिए क्षमता समृद्धी के साथ ही कुल स्वभाव के वैशिष्टये, मूल्ये, निष्ठा, वृत्ती भावना और अच्छी आदतें जतन करना आवश्यक है। क्षमता आशय में इस संबंध में विचार किया गया है।

(vii) अध्यापक में विद्यार्थियों के लिए प्रेम सद्‌भावना और सहानुभूति रहनी चाहिए। विद्यार्थी में अन्तर्भूत शक्ति का विकास में कर सकता हूँ, ऐसा दृढ़ विश्वास और

आंतरिक इच्छा होनी चाहिए। विद्यार्थियों के प्रति उस अध्यापक के मन में भेदभाव की भावना नहीं होनी चाहिए। अध्यापक में नियमितता, समयशीलता, प्रामाणीकता और वस्तुनिष्ठता रहनी चाहिए। अध्यापक की वृत्ती निःस्वार्थी रहनी चाहिए। इसके साथ ही उसमें ज्ञाननिष्ठा, समाजनिष्ठा रहनी चाहिए, अनुचित दबाव का वो शिकार नहीं होगा ऐसा असीम धैर्य, दृढ़ता और निर्भयता भी शिक्षक के पास होनी आवश्यक है। स्वच्छता के प्रति वह हमेशा सचेत रहना चाहिए। शिक्षक को उत्कृष्टता का निरंतर ध्यास लगा रहना चाहिए। विद्यार्थी की गलती और नटखटता के प्रति वह संयमी और सहनशील रहना चाहिए।

स्मार्ट पी.टी. प्रशिक्षण के अन्तर्गत क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम राज्य के विविध संभाग में से शिक्षक, शिक्षक–प्रशिक्षक, शिक्षण विभाग के अधिकारी और शिक्षण क्षेत्र के तज्ञ इनके सहकार्य से और सहभागिता से प्रशिक्षण का मसूदा विकसित किया गया है। इस मसूदे पर कुछ चयनीत अध्यापक अधिकारी तज्ञ आदी सभी घटकों से प्रतिक्रिया ली गई और साथ ही समय–समय पर संबंधितों से चर्चा और विचार विनिमय किया गया सभी की प्रतिक्रिया और प्राप्त हुई उपयुक्त सूचनाओं का विचार करके महाराष्ट्र राज्य शैक्षणिक संशोधन परिषद पुणे द्वारा इसके कार्यान्वयन की योजना तैयार की गई है।'[1]

1.6.3 'क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम' के अन्तर्गत विकसित की जाने वाली दस क्षमताएं–

स्मार्ट पी.टी. प्रशिक्षण में प्रभावी शिक्षक निर्माण होने की दृष्टि से आवश्यक सभी पहलू दस प्रमुख क्षमताओं के स्वरूप में संवर्गीत की गई है। ये प्रमुख दस क्षमता निम्नलिखित हैं।

---

1. शिक्षक समता समृद्धि अध्ययन पुस्तिका SCERT Puna P-2-3

(I) संदर्भ संबंधी क्षमता।

(II) संकल्पनात्मक क्षमता।

(III) विषय–वस्तु संबंधी क्षमता।

(IV) संम्प्रेषणात्मक क्षमता।

(V) अन्य शैक्षिक क्रियाओं से संबंधित क्षमता।

(VI) शिक्षण–अधिगम सामग्री निर्माण से संबंधित क्षमता।

(VII) मूल्यांकन क्षमता।

(IX) माता–पिता तथा अभिभावकों के साथ कार्य संबंधी क्षमता।

(X) समुदाय तथा अन्य अभिकर्मकों के साथ कार्य करने की क्षमता।

I) संदर्भ संबंधी क्षमता –

यह क्षमता शिक्षा के क्षेत्र में अति महत्वपूर्ण मानी जा सकती हैं जो भावी शिक्षक को समाज तथा समुदाय की सामाजिक–आर्थिक संस्कृति, भाषागत, धार्मिक तथा वैचारिक संदर्भों को समझने में सहायक सिद्ध हो सकती है। सामुदायिक अन्तच्छेद को समझना, समानता, सामाजिक न्याय, शैक्षिक अवसर संबंधी नीतिगत सुविधाओं से परिचित होना साक्षरता के विकास में बाधक तत्वों की जानकारी प्राप्त करना, सामाजिक विषमता तथा विषमांगता, विकासात्मक क्रियाएं तथा शहरीकरण, बेरोजगारी, मूल्य प्रवर्द्धन, राजनैतिक गतिशीलता, वैज्ञानिकता तथा तकनीकी विकास आदि के प्रभाव को स्पष्ट रूप से समझना आदि कार्य इस क्षमता आयाम से संबंधित माने गए हैं।[1]

जीवन व्यवहार और परिस्थिति इनमें से प्रत्येक घटना का शिक्षा से संबंध आता है। ऐसा है तो भी स्वयं से लेकर सृष्टि तक के सभी चीजों का शिक्षा से किस तरह से

---

[1] गुप्त राजकुमार (संपादक) भारतीय आधुनिक शिक्षा त्रेमासिक पत्रिका एन.सी.ई.आर.टी. P-35-38

संबंध आता है इसका जागृत होकर विचार करके सद्यस्थिति में शिक्षक का स्थान, भूमिका और जिम्मेदारी का सुस्पष्ट होना इसका मतलब ही संदर्भ क्षमता विकसित होना है।

स्वातंत्रयपूर्वकाल का और साथ ही स्वातंत्रोत्तरकाल का शिक्षा का इतिहास, शिक्षा की वर्तमान स्थिति, सार्वत्रिकरण का उद्देश्य, शिक्षण आयोग की शिफारस, राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) महाराष्ट्र राज्य का कृति कार्यक्रम, राज्य, राष्ट्र, अंतरराष्ट्रीय स्तर के शिक्षा संस्था के संबंध में संदर्भ अध्यापक ने ज्ञात कर लेना (जान लेना) ही स्वयं की संदर्भ क्षमता विकसित करना है।

(II) संकल्पनात्मक क्षमता –

संकल्पनात्मक क्षमता के अन्तर्गत उन सभी वैशिष्टों को समाहित किया जाता है जो कि बाल विकास से संबंधित है। कक्षा की समाजमितीय संरचना को समझना, प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण (सार्वजनिक नामांकन, अवरोहन तथा गुणात्मक शिक्षा) वैश्वीकरण आधुनिकीकरण जैसी संकल्पनाओं को ठीक से समझना इस क्षमता क्षेत्र से संबंधित है।

शिक्षा क्षेत्र से संबंधित प्रचलित एवं अप्रचलित शब्दों का निश्चित अर्थ खोजकर विविध अर्थ की विमांओं से उसको मिलाकर देखने की वृत्ती निर्माण होना इसका मतलब ही संबोध क्षमता का विकास करना है।

शिक्षा के सिद्धांत, विविध विचार प्रवाह, पद्धति, तंत्रे व संज्ञा इसके संबोध क्षमता के अन्तर्गत शिक्षण, प्राथमिक शिक्षा का सार्वत्रिकीकरण, पाठ्यक्रम, वार्षिक नियोजन, शैक्षणिक मूल्यमापन ऐसे अलग–अलग 32 संबोध दिये गये हैं और इसी प्रकार के अन्य नये संबोध वैचारिक दृष्टया स्पष्ट होने के लिए अध्यापकों को हमेशा व पठन, चर्चा, मनन और चिंतन करना आवश्यक है।

(III) विषय–वस्तु (आशय ज्ञान) संबंधी क्षमता –

"इस क्षमता के अन्तर्गत विषयगत क्षमता, विषय–वस्तु में अधिकार के साथ ही अधिगम के क्षेत्र में अन्तराल तथा काठिन्य बिन्दु के संज्ञान, अधिगम में आनन्दपूर्ण क्रियाओं की संभावना वैयक्तित्व तथा सामुहिक अधिगम प्रक्रिया से परिचय, संचार माध्यम का उपयोग (ताकि विषयगत संपन्नता वृद्धि, संभव हो सके) आदि सम्मिलित किए गए हैं।"

"अध्यापकों द्वारा आवश्यक संदर्भ साहित्य के अभ्यास से सखोल ज्ञान प्राप्त करना चाहिए इस उद्देश्य से आशयज्ञान क्षमता का विकास किया गया है। पाठ्यक्रम में दी गयी क्षमता विद्यार्थियों में पूर्णतः व सरलता से करने के लिए अध्यापकों को आशयज्ञान का परिपूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है।

शैक्षिक उद्देश्य पूर्ति के लिए पाठ्यक्रम में दिये गये विषय पाठ्यांश और विद्यार्थियों को दिये जाने वाले अध्ययन अनुभव इसका सखोल ज्ञान होना याने आशयज्ञान क्षमता है।

प्राथमिक शालेय स्तर पर दिये गये विषय, क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम 1995, क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम की पाठ्यपुस्तकें, शिक्षक हस्तपुस्तिका एवं संदर्भ साहित्य के विषय में जानकारी दी गई है।

अध्यापकों ने समव्यवसायियों के संपर्क में रहकर, हमेशा ज्ञानात्मक स्तर ऊँचा करना चाहिए। विषय के संबंध में रूची वृद्धिगत करना और शिक्षा क्षेत्र के नवीन प्रवाह और साथ ही संकल्पनाओं की प्रयत्नपूर्वक जानकारी प्राप्त करना अपेक्षित है।"

(IV) संम्प्रेषणात्मक (शैक्षणिक व्यवहार) क्षमता –

"इस क्षमता के अन्तर्गत मनोविज्ञान, प्रबंधन तथा सामाजिक पक्षों से संबंधित सिद्धांतों के समेकित आधार को समझना आवश्यक माना गया है। विविध क्रियाओं जैसे–कहानी कथन, संगीत, खेल, क्षेत्रीय कार्य तथा यात्राएं, राष्ट्रीय, सामाजिक तथा सांस्कृतिक घटनाओं की सराहना, शिक्षण सामग्री तथा अधिगम साधनों का उपयुक्त प्रयोग, अविच्छिन्न मूल्यांकन अभ्यास, सुधारात्मक उपाय तथा संबंधित कार्यक्रम आदि जिनके माध्यम से उत्तम तथा सम्प्रेषण को सुनिश्चित करना संभव हो सके, इस वर्ग से संबंधित माने गए हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) पर आचार्य राममूर्ति समिति की आस्था तथा पूर्ववर्ती आयोग (1964–66) ने भी शिक्षण अभ्यास एवं सम्प्रेषण कुशलता के क्षेत्र में अनेक कमियां को दूर करने के लिए सुझाव दिये हैं, ताकि छात्राध्यापकों में सम्प्रेषण कुशलता को विकसित कर पाना संभव हो सके।"

"अध्ययन–अध्यापन प्रभावी व परिणामकारक होने के लिए अध्यापकों के पास कुछ कौशल्य रहना चाहिए। विविध पद्धति, उपक्रम और तंत्र इनका एकीकृत उपयोग प्रभावी तरीके से करने का कौशल्य याने शैक्षणिक व्यवहार क्षमता है। शैक्षणिक उद्देश्य, क्षमता आशय, शालापूर्व तैयारी, अध्ययन के नियम इनका अभ्यास करके विद्यार्थी–शिक्षक, विद्यार्थी–विद्यार्थी, विद्यार्थी–वातावरण व विद्यार्थी–वातावरण व विद्यार्थी–साहित्य इन चारो आंतरक्रियाओं का **(Interaction)** यशस्वी होना आवश्यक है। अध्यापकों ने अपना व्यक्तिमत्व समृद्ध करने के लिए ज्ञान, वृत्ती और कृती इन व्यक्तित्व के तीन पहलुओं का संवर्धन जागृत होकर करना चाहिए।"

(V) अन्य शैक्षिक क्रियाओं से संबंधित (शैक्षणिक उपक्रम) क्षमता –

"इस क्षमता के अन्तर्गत प्रातःकालीन प्रार्थना/सभा, राष्ट्रीय घटनाओं को पारित करना जैसे–स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस, बाल दिवस, अध्यापक दिवस, सामाजिक तथा सांस्कृतिक घटनाएं जैसे–जन्माष्टमी, नवरात्र, गणेश महोत्सव, दीपावली, ईद, क्रिसमस, महावीर जयन्ती, बुद्ध जयन्ती, सामुदायिक सहकार्य जैसे ग्राम सफाई, आँख की जांच संबंधी कैम्प, पोलियो उन्मूलन अभियान, शैक्षिक यात्राएँ, नाटक मंचन आदि तथा इन क्रियाओं के लिए नियोजन तथा प्रबंधन हेतु कौशल ज्ञान को आवश्यक रूप से सम्मिलित किया गया है।"

"क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम उपक्रमाधिष्ठित है और इन उपक्रमों के आयोजन से दर्जात्मक शैक्षणिक वातावरण निर्माण होता है और इससे विद्यार्थीयों को प्रभावी अध्ययन करने में मदद मिलती है।

"शैक्षणिक उद्देश्य पूर्ति के लिए पाठ्यविषयक पोषक सहशालेय उपक्रम कल्पकतासे तैयार करके उनकी सूत्रबद्ध व प्रभावी कार्यवाही करने का कौशल्य ही शैक्षणिक उपक्रम क्षमता है।"

पाठ्यविषयक और सहशालेय उपक्रम की प्रमाणशीर, सुयोग्य और कल्पकता से उपयोग करने पर शैक्षणिक उद्देश्य पूर्णतः से साध्य किये जा सकते हैं।

बालक केंद्रित कृतिप्रधान, उपक्रमाधिष्ठित और आनंददायी शिक्षण प्रक्रिया अपेक्षित की गई है। पाठ्यविषयक उपक्रम और मूल्यांकन करते समय उद्देश्य, अनुकूल वातावरण, साहित्य, सहभागी घटक इनका विचार करके लोकशाही पद्धति से ये उपक्रम आयोजित करने चाहिए। इस प्रक्रिया में अध्यापक की भूमिका मार्गदर्शक की रहनी चाहिए।"[2]

(VI) शिक्षण–अधिगम सामग्री और उपयोग संबंधित क्षमता–

"शिक्षण–अधिगम सामग्रियों की विकासात्मक क्षमता के अन्तर्गत स्वाध्याय सामग्रियों की तैयारी को महत्व दिया गया है। जैसे–पाठ्यपुस्तक, कार्य पुस्तक (बहुकक्षा या मल्टीग्रेड क्लास के प्रबंधन हेतु) अध्यापकीय उद्यम स्तरीय उन्नति के लिए अध्यापकीय सह–पुस्तक का निर्माण जैसे–चित्र, आरेख, मानचित्र, सारणी, प्रतिरूप आदी आधुनिक तकनीकी आधारित शिक्षण – अधिगम सामग्री निर्माण जैसे – श्रव्य टेप, दृश्य टेप, स्लाईड, रेडियो, टेलीविजन कार्यक्रम, अनुलेखन, कम्प्यूटर निर्मित कार्यक्रम निर्माण तथा स्थानीय तौर पर उपलब्ध अधिगम संसाधनों की उपयोग कुशलता जैसे–पोस्ट ऑफिस, अस्पताल, पी.सी.ओ. बुथ आदि के उपयोग संबंधी व्यावहारिक कुशलता आदि।"

कढीण संबोध, संकल्पना व प्रक्रिया स्पष्ट करने के लिए शैक्षिक साहित्य का उपयोग आवश्यक है। उसी प्रकार शैक्षिक साहित्य के उपयोग से अध्ययन अध्यापन प्रक्रिया कृतिप्रधान एवं आनंदमयी होती है। डॉ. एडगरडेल के दिये हुए प्रमाण से यह स्पष्ट होता है कि ज्ञानेद्रिंय ही ज्ञान प्राप्ती के द्वार है। (उदा. आँख – 83 प्रतिशत और कान 11 प्रतिशत) इससे यह स्पष्ट होता है कि 94 प्रतिशत ज्ञान आत्मसात करने का कार्य दृक और दृकश्राव्य साधनों के द्वारा होता है। यह ध्यान में रखते हुए शैक्षणिक साहित्य के उपयोग के फायदे, शैक्षणिक साहित्य के प्रकार, शैक्षणिक साहित्य के उपयोग के फायदे, शैक्षणिक साहित्य के प्रकार, शैक्षणिक साहित्य का निर्माण, निर्माण के लिए आवश्यक साहित्य की सूची, शैक्षणिक साहित्य का निर्माण, निर्माण के लिए आवश्यक साहित्य की सूची, शैक्षणिक साहित्य का परिणामकारक उपयोग इस संबंध में जानकारी अध्यापक को होना आवश्यक है।

(VII) मूल्यांकन क्षमता –

"इस क्षमता के अन्तर्गत 35 प्रतिशत उत्तीर्णांक के महत्व को कम करते हुए स्वज्ञानात्मक मूल्यांकन (इल्यूमिनेटिव इवैल्युएशन) को अधिक प्रधानता देने की बात की गई है। इसके अधीन अध्यापक तथा अधिगकमकर्ता दोनों को आत्म–विश्लेषण करने के लिए योग्यता प्रदान करने के साथ ही कक्षा में निरंतर नियमित मूल्यांकन (निरीक्षणाधारित) सामयिक मूल्यांकन आदि में कुशलता प्राप्त करने पर बल दिया गया है तथा समग्र मूल्यांकन की परम्परा को अधिक महत्व न देने की बात की गई है।"

"प्रचलित मूल्यांकन पद्धति में सुधारणा करके क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम पर आधारित मूल्यांकन पद्धति जून 1997 से क्रमशः लागू की गई। मूल्यांकन यह शैक्षिक प्रक्रिया का अविभाज्य घटक है।

पाठ्यक्रम के सर्वसाधारण उद्देश्य कितने प्रमाण में साध्य हो गये और दी गई क्षमता विद्यार्थियों में कितने प्रमाण में विकसित हो गई यह निरंतरता से जांचने की क्षमता याने मूल्यांकन क्षमता है।

अध्ययन में आनेवाली त्रुटि व कठिनाईयों का शोध लेना यह मूल्यांकन प्रक्रिया का मुख्य कार्य है। विद्यार्थियों का बौद्धिक, भावनिक व क्रियात्मक मूल्यांकन होना चाहिए और इस मूल्यांकन से छात्रों की सर्वांगीण प्रगति का परिदृश्य सामने आता है। मूल्यांकन में संख्यात्मक मापन और गुणात्मक वर्णन के साथ ही शिक्षक के अभिप्राय को भी उतना ही महत्व है।

सातत्यपूर्ण मूल्यांकन पद्धति में छात्रों की सर्वकष प्रगति का समालोचन किया जाता है। इसके लिए अध्यापक ने निरीक्षण के द्वारा नोंद (टीप) लेनी चाहिए। यह नोंद

छात्रों की अध्ययन की गलतियाँ, कमियाँ दर्शाने वाली चाहिए। उसी प्रकार विद्यार्थियों के विशेष उल्लेखनीय प्रगति की वैशिष्टयपूर्ण नोंद लेना भी आवश्यक है। क्षमता अप्राप्त विद्यार्थियों के लिए पुनराध्यापन, वैयक्तिक और समूह में सराव, मार्गदर्शन से उपचारात्मक अध्यापन करना चाहिए। नोंद पुस्तीका और प्रगतिपत्रक यह मूल्यांकन के साधन परिषद पथदर्शी प्रकल्प द्वारा प्रमाणित की हुई है। इस साधन द्वारा विद्यार्थियों का मूल्यांकन करना चाहिए।''[2]

(VIII) प्रबंधन क्षमता (व्यवस्थापन क्षमता)

''इस क्षमता में कक्षागत प्रबंधन तथा कक्षेतर क्रियाओं के प्रबंधन, दोनों को ही महत्व दिया गया है, जिनमें कुशलता प्राप्त करना अपेक्षित माना गया है। विशिष्ट कक्षाओं का प्रबंधन, बहुकक्षागत तथा एक अध्यापकीय विद्यालय व्यवस्था का संचालन, योग्यता अर्जन, प्रशासनिक कौशल तथा तकनीकी ज्ञान आदि को भी इसी क्षमता वर्ग के अन्तर्गत रखा गया है।''[1]

''शाला स्तर पर शिक्षक, विद्यार्थी, अभिभावक इनके बीच का संबंध ध्यान में रखकर व्यवस्थापन करना पड़ता है। उपलब्ध मनुष्यबल का सहज एवं उत्स्फूर्त सहभाग लेके उससे साधनों का सुयोग्य एवं समन्वित उपयोग करके कम समय, श्रम और खर्च में शैक्षिक उद्देश्य दर्जात्मक स्तर तक प्राप्त करने का कौशल्य ही व्यवस्थापन क्षमता है।

अध्यापक अगर कुशल व्यवस्थापक है तो वह अनुकूल वातावरण निर्माण कर सकता है। शिक्षा प्रक्रिया में अध्ययन के लिए सुविधा मुहैया कराना और उपक्रमों का कुशलता से आयोजन करना जरूरी है। प्रबंधन करते समय, समय की उपलब्धता, भौतिक

साधनों की उपलब्धता, उपलब्ध मनुष्यबल, नियोजन, कार्यवाही उद्देश्य पूर्ति की जांच से यह घटक ध्यान में रखना पड़ता है।

इसी प्रकार शालानिहाय नियोजन में मुख्य अध्यापक और शिक्षा स्तर का नियोजन करना अपेक्षित है। किसी भी मानव निर्मित अच्छे कार्य का उगम यह मानवी विचारों से होता है यह ध्यान में रखकर ही व्यवस्थापन क्षमता का विकास करना चाहिए।"

(IX) माता पिता तथा अभिभावकों के साथ कार्य संबंधी क्षमता (पालक संपर्क क्षमता) –

"इस क्षमता के अन्तर्गत माता पिता तथा अभिभावकों की सहयोगिता को प्राप्त करने की क्षमता को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया है। नामांकन, विद्यालय में छात्र का अवरोधन, स्तरीय अधिगम सहयोग, नियमानुवर्तिता तथा समयबद्धता, प्रगति आदि के लिए माता–पिता तथा संरक्षकों का सहयोग अपरिहार्य बन जाता है। विशेषकर प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए यह सहयोग अति महत्वपूर्ण होता है।"[1]

"नामांकन, नियमित उपस्थिति और विद्यार्थियों की वैयक्तिक प्रगति इसके लिए पालक संपर्क उपयोगी होता है। पाठ्यक्रम के उद्देश्य साध्य करने के लिए और छात्रों का क्षमतापूर्ण विकास करने के लिए आवश्यकता पड़ने पर अभिभावकों का सहयोग और सहभाग एकत्रित करके प्राप्त कर लेने की क्षमता याने अभिभावक संपर्क क्षमता है।

अभिभावक एवं अध्यापक के सामने छात्रों के सर्वांगीण विकास का लक्ष्य रहता है। उसके लिए विद्यार्थियों का भौतिक, शारीरिक, भावनिक व सामाजिक दृष्टि से विकास होना जरूरी है।

धन के साथ ही अभिभावकों ने पर्याप्त समय भी देना चाहिए। अतिरिक्त अपेक्षाओं से बालकों पर अकारण बोझ नहीं गिरना चाहिए। इसका भी ख्याल अभिभावकों ने रखना चाहिए। शिक्षकों ने खुद की अभिभावक संपर्क क्षमता विकसित करने के लिए अभिभावकों से वैयक्तिक रूप से भेंट देनी चाहिए। सहशालेय कार्यक्रम में अभिभावकों का सहभाग लेना चाहिए, अभिभावक–शिक्षक दिन और छात्र के प्रगति विषयक चर्चा ऐसे उपक्रम शाला स्तर पर आयोजित करने चाहिए।

विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए अभिभावकों का सहकार्य प्राप्त करने के लिए अध्यापकों ने सदैव प्रयत्नरत रहना चाहिए।"[2]

(X) समुदाय तथा अन्य अभिकर्मकों के साथ कार्य करने की क्षमता (समाज संपर्क क्षमता)–

"इस क्षमता के अन्तर्गत सामुदायिक सर्वेक्षण, विद्यालयीन मानचित्रण, सामुदायिक परिच्छेदिका निर्माण आदि कुशलता तथा ज्ञान को सम्मिलित किया गया है ताकि विद्यालय तथा समुदायक के मध्य निरंतर बढ़ती हुई दूरी को कम करना संभव हो सके।"[1]

'शाला' यह एक सामाजिक संस्था है, और शाला के प्रगति के लिए समाज के सहकार्य की आवश्यकता रहती है उसके लिए ग्रामस्तर पर ग्रामशिक्षण समिति (Village Education Commitee) की स्थापना करनी चाहिए। "शाला के सर्वांगीण प्रगति के लिए समाज में जागृति, आत्मीयता और जिम्मेदारी की भावना निर्माण करके समाज का सहकार्य एवं सहभाग प्राप्त करना याने समाज संपर्क क्षमता का विकास करना है। 'शाला' हमारी है और उसकी प्रगति के लिए हमें सर्वतोपरी सहकार्य करना यह हमारा आद्यकर्तव्य है यह भावना समाज में विकसित करना आवश्यक है।

शालाविषयी समाज की कुछ आशा आकांशाएं होती है शालाओं की शैक्षणिक गुणवत्ता का विकास करने के लिए समाज का सहकार्य एवं सहभाग बढ़ाना चाहिए। प्रज्ञावान विद्यार्थी और शिक्षक इनका यथोचित गौरव होना चाहिए इसके लिए ग्राम शिक्षण समिति कार्यरत रहनी चाहिए। शिक्षक ने एक तत्वज्ञ और समाजशास्त्र की भूमिका अदा करनी चाहिए। इस दृष्टिकोण से समाज संपर्क क्षमता अध्यापकों ने विकसित करनी चाहिए।

इस तरह से अध्यापकों ने मुख्यतः दस क्षमता निरंतरता से विकसित करने के लिए निरंतर पठन मनन और चिंतन करके उसको कृतीशीलता की साथ दी तो अध्यापकों की क्षमता समृद्ध होगी और उन्हें निश्चित ही व्यावसायिक यश प्राप्ती होंगी।"[2]

1.7.0 आवश्यकता एवं महत्व –

स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम कई आशाओं एवं लक्ष्यों को ध्यान में रखकर शुरू किया गया था। उनमें से एक महत्वपूर्ण उद्देश्य सेवाकालीन शिक्षकों को प्रशिक्षित करके उन्हें क्षमताधिष्ठित पाठ्यक्रम के बारे में परिचित कराना है।

सभी बच्चों को गुणात्मक प्राथमिक शिक्षा देना बहुत बड़ी चुनौती है तथा शिक्षक ही इस कार्य को अंतिम परिणिति दे सकता है, यही कारण है कि शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों का उत्तर दायित्व बहुत बढ़ जाता है। शोधकर्ता चूंकि एम–एड का छात्र है अपने क्षेत्र के स्मार्ट पी.टी. प्रशिक्षण कार्यक्रम की कार्यप्रणाली जानना शिक्षकों की प्रशिक्षण के संबंध में राय जानना वह अपने लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कितना प्रयासरत है इस कार्यक्रम में दिये जाने वाले प्रशिक्षण को व्यवहारिक रूप में अपनाया जाता है या नहीं इन सब प्रश्नों की

जानकारी हेतु वर्धा डिवीजन के स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के अध्ययन की आवश्यकता महसूस की गई।

इस अध्ययन द्वारा वर्धा जिले के स्मार्ट पी.टी. कार्यक्रम की प्रगति ज्ञात हो सकेगी। कार्यक्रम की भूमिका के प्रति जागरूकता बढ़ेगी तथा कार्यक्रम की गतिविधियों में जो बाधाएं आ रही है उन्हें दूर करने का प्रयास किया जा सकता है।

1.8.0 समस्या कथन –

"प्राथमिक शिक्षा के गुणात्मक सुधार हेतु आयोजित स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का अध्ययन"

1.9.0 शोधकार्य के उद्देश्य –

प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित है।

1) स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के बारे में शिक्षकों के विचारों, मतों का अध्ययन करना।

2) स्मार्ट पी.टी. प्रशिक्षण कार्यक्रम के द्वारा प्राथमिक शिक्षा के गुणात्मक सुधार हेतु किन विधियों एवं क्षमताओं का प्रशिक्षण दिया जा रहा है इसका अध्ययन करना।

3) स्मार्ट पी.टी. कार्यक्रम में प्राप्त विधियों एवं क्षमताओं का अध्यापन पर पड़े प्रभाव का अध्ययन करना।

4) स्मार्ट पी.टी. प्रशिक्षण कार्यक्रम में शिक्षकों द्वारा प्रशिक्षण में प्राप्त विधियां एवं क्षमताओं को कक्षा में लागू करने में आने वाली कठिनाइयां एवं समस्याओं का अध्ययन करना।

5) स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के व्यवहारिकता का अध्ययन करना।

6) स्मार्ट पी.टी. प्रशिक्षण कार्यक्रम का सेवाकालीन शिक्षकों के शिक्षक कौशल पर पड़े प्रभाव का अध्ययन करना।

7) प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षकों द्वारा प्रशिक्षण में प्राप्त विधियों एवं क्षमताओं का कक्षा में उपयोग का अध्ययन करना।

1.10.0 परिकल्पना –

उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निम्न परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया–

1) स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रति शिक्षकों का दृष्टिकोण सकारात्मक है।

2) स्मार्ट पी.टी. शिक्षक शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम प्राथमिक शिक्षकों के लिए उपयोगी है।

3) स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण द्वारा प्रशिक्षित प्राथमिक शिक्षकों का प्रशिक्षण में प्राप्त विधियों एवं क्षमताओं को कक्षा में लागू करने में समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

4) स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का सेवाकालीन शिक्षकों के शिक्षक कौशल पर पर्याप्त प्रभाव पड़ रहा है।

5) प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षकों द्वारा प्रशिक्षण में प्राप्त विधियों एवं क्षमताओं का कक्षा में उपयोग किया जाता है।

1.11.0 अध्ययक की परिसीमाएँ –

प्रस्तुत अध्ययन की निम्नलिखित परिसीमाएँ हैं –

1) महाराष्ट्र के सभी जिलों में स्मार्ट पी.टी. शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाया गया है। परंतु शोधकर्ता ने वर्धा संभाग के चार तहसीलों को शोधकार्य हेतु चुना है।

2) प्रदत्त का संकलन स्मार्ट पी.टी. प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षित प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों द्वारा किया गया है।

3) शोधकर्ता द्वारा वर्धा हिंगणघाट, सेलु, देवली तहसीलों के स्मार्ट पी.टी. प्रशिक्षण द्वारा प्रशिक्षित द्वारा प्रशिक्षित प्राथमिक शिक्षकों से प्रश्नावली तथा साक्षात्कार द्वारा प्रदत्तों का संकलन किया गया है।